Ancient history (AI&A)

B.A. Part II
Paper - IVth

## भू-स्वामित्व (Land ownership in Ancient India)

प्राचीन भारत में भू-स्वामित्व का प्रश्न अति विवादास्पद है। संशय यह था कि भूमि पर राजा का अधिकार था अथवा लोगों का। सिन्धु घाटी की सभ्यता में इस सम्बन्ध में कोई जानकारी प्राप्त नहीं होती है। वैदिक काल में भूमि पर सामूहिक अधिकार था। शतपथ ब्राह्मण में यह वर्णन मिलता है कि भूमि स्वामी लोगों की सम्पत्ति है और राजा केवल उनकी रक्षा के लिए नियुक्त किया जाता था। छठी शताब्दी ईसा पूर्व में राज्य के भली-भाँति संगठित हो जाने के पश्चात् राजा शक्तिशाली हो गया। भू-स्वामित्व के सम्बन्ध में दो प्रकार की विचार-धारायें चल पड़ी। एक अनुसार भूमि का स्वामी राजा है और दूसरे के अनुसार जोतने वाला किसान का अधिकार है। अनेक विद्वानों ने इस बात का उल्लेख किया है कि भारत में भूमि का स्वामी राजा माना जाता था। तात्पर्य यह है कि किसान और अन्य लोग जो भूमि का उपयोग करते थे। वे उसके बदले में राजा को शुल्क देते थे। कुछ अन्य विद्वानों का मत है कि भूमि पर राजा का अधिकार न होकर उसके जोतने वाले अथवा किसानों का होता था। हिन्दू विधि में भी किसानों का भूमि बेचने और खरीदने का अधिकार सम्बन्धी उल्लेख मिलता है।

विभिन्न ग्रन्थों में भी उपरोक्त विचार धाराओं का उल्लेख मिलता है। प्राचीन भारत के हिन्दू-विधि-शास्त्री नीलकंठ ने भूमि के स्वामित्व सम्बन्धी सिद्धान्त अधिक व्यापक रूप से विश्लेषण मिलता है। यह सम्भव है कि कोई राजा किसी राज्य पर विजय द्वारा अधिकार प्राप्त कर ले किन्तु उसका तात्पर्य यह नहीं होता कि भूमि के स्वामित्व उसमें निहित हो जाता है।

Scanned with CamScanner

इसका व्यापक उल्लेख मीमांसादर्शन नामक ग्रंथ में वर्णन मिलता है।
प्रधानमंत्री अथवा महामात्य का भूमि के स्वामित्व के
विषय में नाम बड़े ही सम्मान से लिया जाता है। उसने भूमि के स्वामित्व
सम्बन्धी सिद्धान्तों का बड़ा ही व्यापक विश्लेषण पाया जाता है।

इस सन्दर्भ में प्रायः कहा जाता है कि अनेक
राजाओं ने अनेक राजाओं से भूमि छीन और अन्य लोगों को दे दी। यह
बात का प्रमाण ग्रन्थों में मिलता है। भूमि का स्वामी राजा अथवा
शासक होता था। राजा को जब स्वामिन अथवा मालकिन कहकर
सम्बोधित किया जाता था तो इसका तात्पर्य इतना ही है कि राजा पृथ्वी
का स्वामी कहते हैं।

जातक ग्रन्थों में भी इस बात का उल्लेख नहीं
है कि शासक अथवा सम्राट का स्वामित्व केवल प्रशासनिक है। इसके
आगे वह नहीं बढ़ सकता। वह सम्राट का स्वामी नहीं है। यह
सिद्धान्त हिन्दू राजतंत्र सिद्धान्तों से और भी
परिपुष्ट होता है। गुप्त शासकों एवं अन्य शासकों के अभिलेखों और
शिलालेखों से बात पूर्णतः स्पष्ट हो जाती है कि राजा केवल
भूमि का छठे भाग का ही स्वामित्व प्राप्त था। और वह भी
उसकी उपज के रूप में, भूमि के रूप में नहीं। इस प्रकार प्राचीन
भारत में भूमि का स्वामी राजा नहीं बल्कि कृषक अथवा किसान
होता था। राजा तो केवल उसका पालन और रक्षक था।

इस प्रकार के विचार धाराएँ प्राचीन भारत
में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती हैं।

1. राजा का स्वामित्व और
2. व्यक्तिगत स्वामित्व

1. राजा का स्वामित्व — वैदिक काल में भूमि पर सामूहिक

अधिकार माना जाता था परन्तु राजतंत्र के विकास के साथ-साथ भूमि पर राजा स्वामित्व का विकास होता गया। कुछ धर्म सुधारक जैसे आपस्तम्ब का कहना है कि भू-गर्भ से निकली हुई सम्पत्ति पर सामान्यतः राजा का अधिकार होगा, खनन कर्ता का नहीं। इससे स्पष्ट होता है कि भूमि पर राजा का अधिकार था।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र की टीका करते हुए भट्ट-स्वामी ने एक बात का उल्लेख किया। इसका तात्पर्य यह है कि राजा भूमि और जल दोनों का स्वामी है और लोग इन दोनों चीजों को छोड़कर अन्य वस्तु का स्वामित्व ग्रहण कर सकते हैं। मनस्मृति में भी राजा के भूमि स्वामित्व का उल्लेख हुआ है। इससे स्पष्ट होता है कि प्राचीन काल में राजा भूमि का एक मात्र रक्षक और उसका स्वामी होता था।

2. व्यक्तिगत भूमि स्वामित्व :— पूर्व मीमांसा में इस बात का उल्लेख मिलता है कि राजा यज्ञ के बाद सभी चीजें दान में दे सकता था, परन्तु भूमि नहीं। इससे स्पष्ट होता है कि राजा भूमि पर सार्वभौम अधिकार नहीं था। भूमि पर सामान्य सम्प्रभुता से लिया जा सकता है। कृषि की भूमि के मालिक के रूप में नहीं। कृषि के भूमि का असली मालिक तो उसको जोतनेवाला किसान ही है।

कुछ अभिलेखों से ज्ञात है कि लोगों ने अपनी भूमि को दान दिया और उसको बेचा, इससे भी भूमि पर व्यक्तिगत स्वामित्व सिद्ध होता है। कुछ ताम्रपत्रों से यह भी जानकारी प्राप्त होती है कि राजा केवल राजकीय भूमिदान करता था। यदि वह कोई ग्राम को दान में देता था तो उसका तात्पर्य केवल उससे होनेवाला आय धन देता था

कृषकों को भूमि से कभी अलग नहीं किया जा सकता। इस प्रकार के उदाहरण से यह जानकारी प्राप्त होती है कि राजा भूमि खरीद कर दान में देता था। इससे भूमि पर व्यक्तिगत अधिकार स्पष्ट होता है।

उपसंहार — उपर्युक्त दोनों विचारधाराओं के प्रमाणों पर सामाजिक रूप से विवेचना करने पर राजा का ही अधिकार था परन्तु व्यावहारिक रूप में भू-खण्डों पर कृषि कार्य करते थे। उस पर अपने भवनों का निर्माण करते थे। वह अपनी भूमि को अन्य व्यक्तियों को भी किराये पर दे सकते थे। इस प्रकार वास्तव में यदि यह कहा जाय कि प्राचीन भारत में भूमि का स्वामित्व राजा का नहीं वरन प्रजा का था, तो अनुचित न होगी।

Dr. Birendra Prasad Singh
Associate Professor
Deptt of AIHAS
Shershah College Sasaram